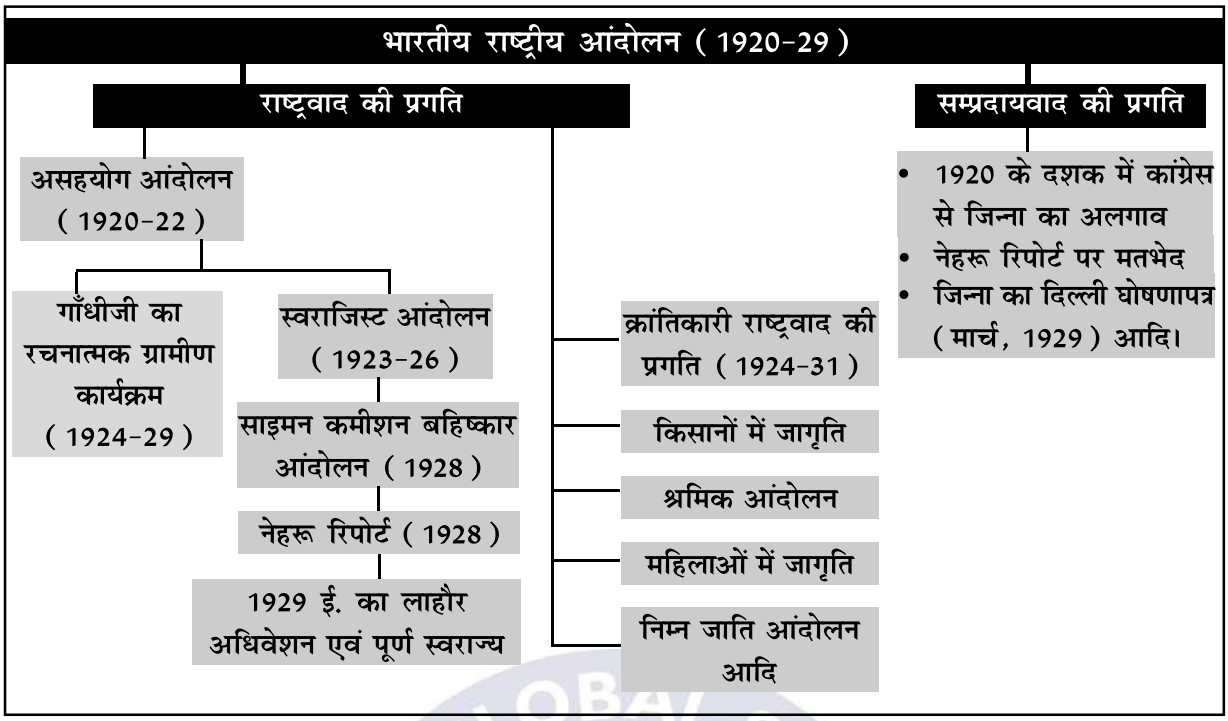

असहयोग आंदोलन (1920 ई.)

- 1920-21 ई. में असहयोग आंदोलन के साथ ही भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ने जन आंदोलन के दौर में प्रवेश किया। असहयोग आंदोलन, जो आवश्यक रूप से खिलाफत मुद्दे के साथ संबद्ध था, में उस अहिंसात्मक संघर्ष की रणनीति को पहली बार राष्ट्रीय स्तर पर अपनाया गया जिसे आगे कांग्रेस द्वारा विभिन्न आंदोलनों के प्रमुख अस्त्र के रूप में उपयोग किया जाना था। राष्ट्रीय आंदोलन में पहली बार कांग्रेस एक ऐसे आंदोलन के समर्थन में खड़ी थी जिसका स्पष्ट उद्देश्य ब्रिटिश सरकार के किसी भी दमनात्मक कार्य में असहयोग करना था।

कारण :-

1. **रॉलेट एक्ट (1919)**- प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् जनता को उम्मीद थी कि ब्रिटिश सरकार उनके हितों की रक्षा के लिये कुछ करेगी, परन्तु सरकार ने देश में मार्च, 1919 में रॉलेट एक्ट के नाम से नया कानून लागू कर दिया जिसका उद्देश्य युद्धकालीन प्रतिबंधों को स्थायी बनाना था। इस अधिनियम ने सरकार को किसी भी व्यक्ति को बिना मुकदमा चलाए कैद में रखने का अधिकार दिया था।
2. **जलियाँवाला बाग नरसंहार**- रॉलेट एक्ट के विरोध के दौरान हुए जलियाँवाला बाग नरसंहार ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की बर्बरता को और उजागर किया। दरअसल 13 अप्रैल, 1919 को वैशाखी के दिन पंजाब में अपने जनप्रिय नेताओं डॉ. सैफुद्दीन किचलू तथा डॉ. सत्यपाल की गिरफ्तारी के खिलाफ विरोध प्रकट करने के लिये जलियाँवाला बाग में एक भीड़ इकट्ठी हुई थी। इसी भीड़ पर अमृतसर के कमांडर जनरल डायर ने बिना चेतावनी दिए, चौतरफा गोली चलाने का आदेश दे दिया जिसमें हजारों लोग मारे गए।
3. **हंटर समिति की रिपोर्ट**- जलियाँवाला बाग हत्याकांड पर सरकार की हंटर समिति की रिपोर्ट ने भी कॉन्ग्रेसियों में गहरा असंतोष भर दिया क्योंकि इसमें जलियाँवाला बाग हत्याकांड जैसे बर्बरतापूर्ण कार्य को सही ठहराया गया था तथा जनरल डायर को अपराधमुक्त कर दिया गया था।
4. **खिलाफत का मुद्दा**- गाँधीजी को 1920 ई. में खिलाफत के रूप में एक नया मुद्दा मिल गया। खिलाफत आंदोलन भारत में मुख्यतः मुसलमानों द्वारा चलाया गया राजनीतिक-धार्मिक आंदोलन था, जिसका मुख्य उद्देश्य तुर्की के खलीफा के पद की पुनर्स्थापना करने के लिये अंग्रेजों पर दबाव बनाना था।

- दरअसल, प्रथम विश्व युद्ध में मुसलमानों का सहयोग पाने के लिए ब्रिटिश सरकार ने उनसे वादा किया था कि ब्रिटेन तुर्की की अखंडता तथा सार्वभौमिकता बनाए रखेगा। परन्तु ब्रिटेन ने युद्ध की समाप्ति पर तुर्की के साथ कठोर व्यवहार किया।

खिलाफत आंदोलन के कारण :-

- 1912-13 ई. के बाल्कन युद्ध के बाद 1913 ई. में आयोजित लंदन सम्मेलन में यूरोपीय शक्तियों द्वारा तुर्की के विरुद्ध विरोध की नीति को अपनाया गया। इस मुद्दे को लेकर मुस्लिम लीग में नाराज़गी थी।

- प्रथम विश्वयुद्ध के बाद पेरिस शांति सम्मेलन, 1919 में तुर्की को कठोर दंड देने का निर्णय लिया गया। इसमें खलीफा के पद को समाप्त किये जाने का प्रावधान भी शामिल था। चूँकि तुर्की का खलीफा पूरे विश्व में सुन्नी मुसलमानों का धर्मगुरू माना जाता था। अत: ऐसे व्यवहार से मुसलमानों का क्षुब्ध होना स्वाभाविक ही था।
- उसी तरह, मुस्लिम लीग की निरंतर मांग के बावजूद अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी पर सरकार नियंत्रण कम करने के लिए राजी नहीं थी। सरकार के इस फैसले से भी लीग में असंतोष था।

गाँधी द्वारा खिलाफत आंदोलन का समर्थन करने के कारण :-

- गाँधीजी ने खिलाफत आंदोलन के प्रति सहानुभूति व्यक्त की तथा उसे भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में हिंदू-मुस्लिम एकता स्थापित करने का एक ऐसा अवसर माना जो कि आगे सौ वर्षों तक नहीं प्राप्त होना था। इसके अतिरिक्त गाँधीजी द्वारा खिलाफत आंदोलन का समर्थन करने के निम्नलिखित कारण थे-
- वह ब्रिटिश की 'फूट डालो और राज करो' की नीति का जवाब 'जोड़ो और विरोध करो' की नीति से देना चाहते थे।
- तुर्की के सैनिक कमांडर मुस्तफा कमाल पाशा ने प्रथम विश्वयुद्ध में यूरोपीय शक्तियों को चुनौती दी, लेकिन मित्र राष्ट्रों ने प्रथम विश्वयुद्ध जीतने के पश्चात् स्वयं को अपराजेय घोषित कर दिया था। अत: गाँधीजी ने खिलाफत का मुद्दा उठाकर एक तरह से स्वयं को साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चे से जोड़ दिया।

घटनाक्रम:-

- राष्ट्रवादियों के प्रभाव में मुस्लिम लीग ने 1920 में असहयोग का प्रस्ताव पारित किया। तत्पश्चात् गाँधी ने भी कांग्रेस पर पंजाब ज्यादती, खिलाफत ज्यादती तथा स्वराज के मुद्दे पर एक आखिल भारतीय आंदोलन शुरू करने का दबाव डाला। किंतु कुछ कांग्रेसी नेता गाँधी के इस प्रस्ताव का विरोध कर रहे थे, किंतु गाँधी ने 1 अगस्त, 1920 को असहयोग आंदोलन आरंभ किया। सितम्बर, 1920 में कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में इस प्रस्ताव को स्वीकृति मिली। फिर दिसंबर, 1920 में नागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में इसे हरी झंडी मिल गयी।

असहयोग आन्दोलन के कार्यक्रम :-

- इस आन्दोलन में दो प्रकार के कार्यक्रम रखे गए- नकारात्मक तथा रचनात्मक कार्यक्रम। नकारात्मक कार्यक्रमों में उपाधियों एवं राजकीय सम्मानों का त्याग, सरकार से संबद्ध विद्यालयों एवं महाविद्यालयों का बहिष्कार, न्यायालयों का बहिष्कार, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार आदि की गणना की जा सकती है।
- दूसरी तरफ, रचनात्मक कार्यक्रमों में राष्ट्रीय शिक्षण संस्थानों की स्थापना, ग्राम पंचायतों की स्थापना, कताई-बुनाई को प्रोत्साहन, हिन्दू-मुस्लिम एकता पर जोर, छूआ-छूत का अंत तथा अहिंसा के पालन पर बल दिया गया। गाँधी जी ने जनता को आश्वासन दिया कि अगर उपर्युक्त कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संपादित किया गया तो, एक वर्ष में स्वराज की प्राप्ति हो जायेगी।
- इस समय गाँधीजी ने 'कैसर-ए-हिंद' और जमनालाल बजाज ने 'राय बहादुर' की उपाधि सरकार को वापस कर दी। मोतीलाल नेहरू, तेजबहादुर सप्रू और सैफुद्दीन किचलू तथा चित्तरंजनदास जैसे महत्वपूर्ण वकीलों ने अपने पेशे का परित्याग किया। इस कार्यक्रम को सरल बनाने के लिए बड़ी संख्या में राष्ट्रीय स्कूल तथा कॉलेज खोले गए। इनमें जामिया मिलिया इस्लामिया, काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ तथा गुजरात विद्यापीठ प्रमुख हैं। सुभाष चन्द्र बोस को राष्ट्रीय महाविद्यालय का अध्यक्ष बनाया गया।
- चरखे का प्रसार तथा तिलक स्वराज फंड की स्थापना पर विशेष बल दिया गया। कॉन्ग्रेस की सदस्यता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई और देखते-देखते तिलक स्वराज फण्ड में 1 करोड़ रुपये जमा हो गये। खादी तो राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रतीक बन गई।
- स्वदेशी आधार को मजबूत करने के लिये विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के निर्णय को और प्रभावी ढंग से लागू किया गया।
- 5 फरवरी, 1922 को चौरी-चौरा नामक स्थान पर एक बड़ी हिंसक घटना हुई। इस हिंसात्मक घटना के पश्चात् गाँधी ने 12 फरवरी, 1922 को यह आंदोलन वापस ले लिया।

असहयोग आंदोलन में सामाजिक भागीदारी :-

- इस आंदोलन में पहली बार किसानों की भागीदारी, छात्रों और बुद्धिजीवियों की भागीदारी, मुस्लिमों की भागीदारी तथा महिलाओं की भागीदारी हुई।

असहयोग आन्दोलन का योगदान :-

- असहयोग आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अंतर्गत पहला जन आंदोलन था। इसमें विभिन्न वर्गों की भागीदारी हुई। अब कांग्रेस पर कोई आरोप नहीं लगा सकता था कि कांग्रेस महज मुट्ठी भर अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व करती है।
- क्षेत्रीय आधार पर भी, असहयोग आंदोलन का व्यापक विस्तार देखा गया। कांग्रेस के पूर्व आंदोलन के विपरीत, जो

केवल राजनीतिक दृष्टि से सक्रिय क्षेत्रों को अधिक प्रभावित करते थे, असहयोग आंदोलन ने बिहार संयुक्त प्रांत, गुजरात जैसे अपरपंरागत क्षेत्रों पर भी गहरा प्रभाव छोड़ा।

- कांग्रेस की स्वदेशी एवं बहिष्कार की नीति से देशी उद्योगों को लाभ मिला। रचनात्मक कार्यक्रम के तहत देशी शिक्षण संस्थानों की स्थापना भी हुई; यथा- काशी विद्यापीठ, जामिया मिलिया इस्लामिया आदि। गाँवों में चरखे को प्रोत्साहन मिला तथा छुआ-छूत विरोधी आंदोलन को बल मिला।
- कांग्रेस का संगठनात्मक सुधार हुआ तथा ग्राम, तालुका एवं जिला स्तर पर समितियों का गठन हुआ। असहयोग आंदोलन ने हिंदू-मुस्लिम एकता को प्रोत्साहन दिया।

असहयोग आन्दोलन की सीमाएँ :-

- गांधी जी द्वारा आंदोलन को वापस लिये जाने के कारण लोगों में, विशेषकर युवाओं में, निराशा की लहर फैल गई। उदाहरण के लिए, जवाहरलाल नेहरू ने अपनी निराशा जताई और सुभाषचंद्र बोस ने इसे राष्ट्रीय संकट कहा। वहीं दूसरी तरफ असहयोग और खिलाफत के बीच जो सहमति थी, वह टूट गई।
- खिलाफत जैसे धार्मिक मुद्दे पर एक अखिल भारतीय आंदोलन शुरू करने के निर्णय ने भारतीय राजनीति में एक बहुत गलत मिसाल कायम की, इससे देश में सांप्रदायिक राजनीति को प्रोत्साहन मिला।

प्रश्नः उन परिस्थितियों की व्याख्या कीजिए जिसके कारण असहयोग आंदोलन और खिलाफत आंदोलन के बीच सह-संबंध स्थापित हुआ?

उत्तरः राष्ट्रवादी प्रभाव में मुस्लिम लीग पहले से ही सरकार से दूर हटने लगी थी। फिर हाल में कुछ ऐसी घटनाएँ हुईं जिस कारण युवा नेताओं के प्रभाव में मुस्लिम लीग ने खिलाफत के प्रस्ताव को अपना लिया।

1. 1912-13 में यूरोप में ऑटोमन साम्राज्य एवं पूर्वी यूरोप के ईसाई राज्यों के बीच जो संघर्ष हुआ, उसमें पश्चिमी देशों ने ईसाई राज्यों के प्रति अपना झुकाव दिखाया था।
2. मुस्लिम लीग के अनुरोध के बावजूद सरकार ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के प्रबंधक को अपने नियंत्रण में ले लिया था।
3. प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् सेव्रे की गुप्त संधि में तुर्की को कठोरतापूर्वक दंडित किया जा रहा था, जबकि तुर्की का खलीफा मुस्लिम विश्व का प्रधान था।

मुस्लिम लीग ने जून, 1920 के लखनऊ प्रस्ताव में खिलाफत का प्रस्ताव पारित किया। गांधीजी ने खिलाफत का समर्थन किया तथा फिर गांधीजी कांग्रेस पर भी दबाव डालने लगे कि कांग्रेस भी पंजाब ज्यादती, खिलाफत ज्यादती एवं स्वराज्य के मुद्दे पर अखिल भारतीय आंदोलन आरंभ करे।

हालाँकि कांग्रेस के अंदर गाँधी जी के इस प्रस्ताव का विरोध बना रहा, परन्तु फिर भी गांधीजी ने सितम्बर, 1920 में कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में असहयोग के प्रस्ताव का अनुमोदन तो ले लिया, किंतु वे अगस्त में ही असहयोग आंदोलन आरंभ कर चुके थे, फिर आगे दिसम्बर, 1920 के नागपुर अधिवेशन में उन्होंने असहयोग के प्रस्ताव का पूरी तरह अनुमोदन ले लिया।

इस प्रकार असहयोग एवं खिलाफत के मुद्दे के बीच सह-संबंध स्थापित हुआ।

प्रश्नः क्या गांधी के द्वारा खिलाफत के मुद्दे पर असहयोग आंदोलन चलाया जाना उनकी धर्म-निरपेक्ष साख पर बट्टा लगता है? अपने मत के पक्ष में उत्तर दीजिए

उत्तर : हालांकि यह सही है कि खिलाफत जैसे धार्मिक मुद्दे पर राजनीतिक आन्दोलन चलाया जाना अल्पकालिक लाभ के लिये दीर्घकालिक घाटे का सौदा सिद्ध हुआ। परन्तु हम ऐसा नहीं कह सकते कि यह गाँधी की धर्मनिरपेक्ष छवि को खराब करता है। इसके कारण निम्नवत् हैं-

- गाँधी 'डिवाइड एंड रूल' के जवाब में 'यूनाइट एंड फाइट' की नीति अपना रहे थे।
- प्रो. इरफान हबीव खिलाफत के मुद्दे को व्यापक वैश्विक सन्दर्भ में देखते हैं। उनके विचार में जब प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् पश्चिमी साम्राज्यवादी शक्तियों के समक्ष सभी अपने घुटने टेक चुके थे तो मुस्तफा कमाल पाशा के अधीन तुर्की पश्चिमी साम्राज्यवाद के विरूद्ध अकेला खड़ा था। वैसी स्थिति में गाँधी जी ने तुर्की को समर्थन देकर अपने आप को साम्राज्यवादी विरोध के मोर्चे से जोड़ दिया।
- गाँधी कम्पोजिट राष्ट्रवाद में विश्वास करते थे जिसके तहत विभिन्न धार्मिक एवं जातीय पहचान के होते हुये भी विभिन्न समूह भारतीय राष्ट्रवाद की मुख्य धारा से जुड़े रहे।

उपर्युक्त कथन के प्रकाश में हम ऐसा कह सकते हैं कि गांधीजी के द्वारा खिलाफत का मुद्दा उठाया जाना उनकी धर्मनिरपेक्ष छवि पर प्रश्न नहीं लगाता।

प्रश्नः भारतीय आदोलन में असहयोग आंदोलन की भूमिका का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

उत्तरः असहयोग आंदोनल ने कांग्रेस के नेतृत्व को राष्ट्रीय आंदोलन में रूपांतरित कर दिया। उसने उसके स्वरूप एवं लक्ष्य दोनों को परिवर्तित किया। इसे निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है।

1. कांग्रेस का आंदोलन प्रायः बंगाल के भद्रलोक, महाराष्ट्र के चितपावन ब्राह्मण तथा मद्रास के ब्राह्मणों तक सीमित रहा था। परन्तु असहयोग आंदोलन, उत्तर प्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक जैसे अपरम्परागत क्षेत्र तक भी फैल गया।
2. इसमें व्यापक जनभागीदारी रही। छात्र एवं बुद्धिजीवी, किसान, श्रमिक, महिलाएं, मुसलमान सभी इसमें शामिल रहे थे। यह कांग्रेस के नेतृत्व में पहला जन आंदोलन था।

एक तरह से देखा जाये तो यह समकालीन विश्व में सबसे बड़ा आंदोलन था और लॉर्ड डफरिन जैसा कोई ब्रिटिश इस प्रकार का विचार नहीं कर सकता था कि कांग्रेस केवल मुट्ठीभर अल्पसंख्यक समूह का प्रतिनिधित्व करती है।

3. असहयोग आंदोलन ने स्वतंत्रता के लक्ष्य का भी विस्तार किया। इसने राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक स्वतंत्रता पर भी बल दिया, इसका एक प्रमुख कार्यक्रम रहा था छूआ-छूत का अंत।
4. असहयोग आंदोलन ने बहिष्कार की नीति पर बल देकर देशी उद्योगों को भी प्रोत्साहन दिया, साथ ही रचनात्मक कार्यक्रम के तहत इसने देशी शिक्षण संस्थानों की स्थापना पर बल दिया। उदाहरण के लिए, काशी विद्यापीठ, जामिया-मिलिया-इस्लामिया विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ आदि।
5. असहयोग आंदोलन के मध्य संगठनात्मक सुधारों पर भी बल दिया गया। उदाहरण के लिए, कांग्रेस संगठन को मजबूत बनाने के लिए ग्राम, ताल्लुक, जिला, प्रांतीय एवं अखिल भारतीय स्तर पर समिति का गठन किया गया।

परन्तु तस्वीर का एक दुःखद पहलू भी है। असहयोग आंदोलन की अपनी निश्चित सीमाएँ रहीं-

1. खिलाफत के मुद्दे पर असहयोग आंदोलन चलाया जाना। राजनीतिक में धर्म का औचित्य सिद्ध करना।
2. गांधीजी के द्वारा अचानक असहयोग आंदोलन वापस लिए जाने के कारण एक तरफ युवाओं में निराशा हुई। उदाहरण के लिए, जवाहर लाल नेहरू ने अपनी निराशा जताई और सुभाष चंद्र बोस ने राष्ट्रीय संकट कहा। वहीं दूसरी तरफ असहयोग और खिलाफत के बीच की जो सहमति थी, वो सहमति टूट गई।

उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद असहयोग आंदोलन ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रश्नः- पिछली शताब्दी के तीसरे दशक से भारतीय स्वतंत्रता की स्वप्न दृष्टि के साथ सम्बद्ध हो गये नये उद्देश्यों को उजागर कीजिए। (250 शब्द, UPSC-2017)

उत्तरः- राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में, 1920 का दशक एक रचनात्मक चरण के रूप में आया, जिसके दौरान नए उद्देश्य और कार्यक्रम पेश किए गए और उन्होंने आंदोलन को एक नया आयाम दिया।

पहले स्वतंत्रता आंदोलन का उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतंत्रता था, लेकिन इस चरण के दौरान इसमें आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता भी जुड़ गया। नए उद्देश्यों ने आंदोलन की संपूर्ण रणनीति को प्रभावित किया।

आर्थिक स्वतंत्रता का उद्देश्य-

1920 के दशक में राष्ट्रीय आंदोलन के राजनीतिक और आर्थिक मोर्चे एक-दूसरे के करीब आ गए। फिर, इस बात पर जोर दिया गया कि भारतीय समाज के आंतरिक अंतर्विरोध ों को भी दूर किया जाना चाहिए। यह अंतर्विरोध उद्योगपतियों और श्रमिकों, जमींदारों और किसानों के बीच मौजूद था। इस दौरान वामपंथी दल अर्थात् कम्युनिस्ट और समाजवादी दल काफी सक्रिय हो गए और किसानों और श्रमिकों को लामबंद करना जारी रखा। इसके अलावा, ट्रेड यूनियन आंदोलन को प्रोत्साहन मिला और 1936 में अखिल भारतीय किसान सभा का गठन हुआ। फिर इसी दौरान, सुभाष और जवाहर लाल नेहरू जैसे युवा नेताओं के अंतर्गत कांग्रेस ने आंतरिक परिवर्तन किया और कराची अधिवेशन (1931), लखनऊ अधिवेशन (1936) और फैजपुर अधिवेशन (1937) में इसने कुछ समाजवादी कार्यक्रम को अपनाया।

सामाजिक स्वतंत्रता का उद्देश्य-

जाति आंदोलन के साथ-साथ महिला अधिकारों के आंदोलन ने राष्ट्रीय आंदोलन में सामाजिक आयाम जोड़े। 1920 के दशक के बाद से महाराष्ट्र में भीमराव अंबेडकर और मद्रास में रामास्वामी पेरियार नायकर जैसे नेताओं ने निचली जाति के लोगों के मुद्दे को राष्ट्रीय प्राथमिकता की सूची में लाया और यहाँ तक कि गांधी ने भी इसे स्वीकार किया। इसी तरह, महिला नेताओं जैसे श्रीमती एनी बेसेंट और डॉ. सरोजिनी नायडू ने महिलाओं के मताधिकार के लिए अभियान चलाया।

इस प्रकार, 1920 के दशक के बाद से राष्ट्रीय आंदोलन की प्रकृति और अधिक समावेशी हो गई।

असहयोग आंदोलन एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन के मध्य कांग्रेस के अंतर्गत भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य धारा में उभरने वाली प्रवृत्तियाँ

- असहयोग आंदोलन एवं सविनय अवज्ञा आंदोलन कांग्रेस के नेतृत्व में व्यापक जनआंदोलन को दर्शाते हैं, परन्तु इसके बीच के काल में भी आंदोलन चलता रहा था तथा विभिन्न प्रकार की राजनीतिक प्रवृत्तियाँ उभरती रही थीं। ये इस प्रकार हैं-

रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम

- गाँधी कांग्रेस के कार्यकर्त्ताओं के एक समूह के साथ रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम की ओर मुड़ गये और लगभग 1924 से 1929 तक उस कार्यक्रम में संलग्न रहे। रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यों को अपनाया गया था; यथा-चरखे को लोकप्रिय बनाना, प्रभात फेरी, सड़कों की सफाई, ग्राम पंचायत का गठन, अस्पृश्यता का अंत आदि।
- बिपिन चद्र ने इसे संघर्ष-विराम-संघर्ष का नाम दिया अर्थात् गाँधीजी संघर्ष करते थे, फिर बीच में विराम लेकर पिछले संघर्ष के लाभ को संगठित करते और अगले संघर्ष की तैयारी करते। ऊपरी स्तर पर देखने से यह ज्ञात होता है कि गाँधी का रचनात्मक ग्रामीण कार्यक्रम केवल प्रतीकात्मक एवं प्रभावहीन था, परन्तु ग्रामीण क्षेत्र में गाँधीवादी राष्ट्रवाद को फैलाने और कांग्रेस के जनाधार को बढ़ाने में इसका अहम योगदान रहा था।

स्वराज आंदोलन

- असहयोग आन्दोलन की असफलता के पश्चात् कांग्रेस दो खेमों में विभाजित हो गयी। कांग्रेस का एक खेमा चाहता था कि कांग्रेसियों को पूरी तरह से ग्रामीण क्षेत्रों में रचनात्मक कार्यों में जुट जाना चाहिए। इस खेमे से जुड़े प्रमुख नेता थे – चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, राजेन्द्र प्रसाद, वल्लभ भाई पटेल, एम. ए. अंसारी आदि। ये अपरिवर्तवादी थे। इनका मानना था कि गाँधीवादी रचनात्मक कार्यों के माध्यम से ग्रामीण जनता में जागरुकता आयेगी जो किसी भी आन्दोलन को प्रारंभ करने के लिए आवश्यक है।
- दूसरी तरफ, सी.आर. दास, मोतीलाल नेहरू तथा विठ्ठल भाई पटेल जैसे नेता अपरिवर्तनवादी खेमे की विचारधारा से संतुष्ट नहीं थे। इन्होंने औपनिवेशिक सत्ता का विरोध जारी रखने के लिए विधान मंडलों का बहिष्कार करने की बजाय असहयोग आन्दोलन को विधान मंडलों में ले जाने का सुझाव रखा। इनका कहना था कि विधान परिषदों का सदस्य बनकर वे ब्रिटिश सांविधानिक सुधारों के पाखंड का पर्दाफाश करेंगे। 1 जनवरी, 1923 को इन नेताओं ने एक नई पार्टी 'स्वराज पार्टी' के गठन की घोषणा की।
- स्वराज पार्टी ने भी कांग्रेस के ही कार्यक्रम को अपना कार्यक्रम बनाया तथा रचनात्मक कार्यक्रम की आवश्यकता पर बल दिया। अंतर सिर्फ इतना था कि इस नई पार्टी ने साल के अंत में होने वाले चुनावों में भागीदारी का निश्चय किया था।
- 1 नवम्बर, 1923 के चुनावों में स्वराज पार्टी ने भाग लिया। इस चुनाव में स्वराज पार्टी को बड़ी सफलता प्राप्त हुई। सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेंबली की 105 निर्वाचित सीटों में से 42 पर इनकी जीत हुई। मध्य प्रांत में इसे स्पष्ट बहुमत मिला, तो बंगाल में यह सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी। बम्बई एवं संयुक्त प्रांत में इसका प्रदर्शन अच्छा रहा। सिर्फ मद्रास तथा पंजाब में जातिवादी राजनीति और साम्प्रदायिकता के उभार के चलते इसे खास सफलता नहीं मिल पायी।
- स्वराजी कठिन संघर्ष तथा सभी वर्गों के समर्थन के बावजूद भी 'कौंसिल प्रवेश की राजनीति' के दीर्घकालिक प्रभाव उत्पन्न करने में सफल नहीं हुए। अत: यह आंदोलन शीघ्र ही बिखरने लगा तथा 1926 ई. तक स्वराज पार्टी का अवसान हो गया। इसके बावजूद स्वराज पार्टी की सबसे बड़ी सफलता यह रही कि इसने ऐसे समय में राजनीतिक गतिविधियों को जारी रखा, जब राष्ट्रीय आंदोलन सुस्त पड़ गया था।

साइमन कमीशन (1927 ई.)

- 1919 ई. के भारत शासन अधिनियम के अनुसार लागू की गई द्वैध शासन प्रणाली की सफलता या असफलता की जाँच हेतु एक कमीशन का गठन होना था। इसी के परिप्रेक्ष्य में नवम्बर, 1927 ई. में साइमन कमीशन के गठन की उद्घोषणा हुई। इसमें सात सदस्य थे। साइमन कमीशन के मुद्दे पर सभी भारतीय पार्टियों ने आपत्ति जताई। इस आपत्ति के निम्नलिखित कारण थे -
  1. कमीशन का गठन समय से दो वर्ष पूर्व किया गया था।
  2. इस कमीशन के सभी सातों सदस्य श्वेत थे, जबकि उस समय ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारतीय सदस्य के रूप में लॉर्ड सिन्हा (सत्येन्द्र प्रसन्न सिन्हा) तथा सकलतवाला कार्यरत थे।
  3. भारतीय नेताओं का कहना था कि भारत की कोई संस्था ही भारतीय संविधान की निर्माता हो सकती थी।
  4. भारतीय नेताओं का कहना था कि स्वराज संबंधी योग्यता के लिए किसी परीक्षा की जरूरत नहीं होती है। यह हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।

- 3 फरवरी, 1928 को साइमन कमीशन के बंबई के तट पर उतरने के साथ ही देशव्यापी बहिष्कार आंदोलन प्रारंभ हो गया, जिसमें लगभग सभी दलों ने भागीदारी की। इतना तक कि सुरेन्द्र नाथ बनर्जी के द्वारा गठित इंडियन लिबरल फेडरेशन तथा जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग ने भी इसका विरोध किया। इसके साथ ही हिंदू महासभा भी इसके विरोध में शामिल थी।
- संयुक्त प्रांत में जवाहरलाल नेहरू और गोविन्द वल्लभ पंत ने इसका विरोध किया। लखनऊ में खलिकुज्जमा ने इस विरोध का नेतृत्व संभाला। पंजाब में इसके विरोध प्रदर्शन में लाला लाजपतराय पर पुलिस ने लाठी चलायी तथा घायल होने से उनकी मृत्यु हो गई।
- 1930 ई. में साइमन कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित की गई। इसमें निम्नांकित प्रावधान किये गए थे –
  - इस आयोग ने माना कि भारत सरकार अधिनियम, 1919 द्वारा स्थापित द्वैध शासन व्यवस्था सफल नहीं रही है, अतः इसे समाप्त कर प्रांतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना की जाए तथा भारत की विविधता को देखते हुए केंद्र में संघीय व्यवस्था की स्थापना की जाए।
  - पृथक् निर्वाचन व्यवस्था को जारी रखा जाए तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिये गवर्नर-जनरल और गवर्नरों को विशेष अधिकार दिया जाए।
  - विधानमंडलों का पुनर्गठन कर सदस्य संख्या का विस्तार किया जाए।
  - इसके अतिरिक्त मताधिकार का विस्तार करने, सेना का भारतीयकरण करने तथा भारत के संबंध में गृह सरकार की शक्तियों को कम करने की बात कही गई।
- भारतीयों ने इस रिपोर्ट को अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसमें उनकी मुख्य माँग 'स्वराज' या 'डोमिनियन स्टेटस' देने का उल्लेख तक नहीं किया गया था।

साइमन कमीशन बहिष्कार कार्यक्रम का महत्व :-

- इसने भारतीय दलों को राजनीतिक मोर्चे पर लामबंद कर ब्रिटिश साम्राज्य के विरोध के लिये प्रेरित किया। इससे राष्ट्रीय आंदोलन को नवीन गति प्राप्त हुई।
- इसमें छात्रों की व्यापक भागीदारी रही, जिसके परिणामस्वरूप छात्रों ने पहली बार राजनीतिक अनुभव प्राप्त कर अनेक छात्र संगठनों को जन्म दिया।
- इसने भारतीयों की 'स्वशासन' की माँग को प्राथमिकता क्रम में ऊपर ला दिया तथा भारतीयों द्वारा भारत के संविधान को निर्मित किये जाने की माँग को प्रबलता से उठाया जाने लगा।

नेहरू रिपोर्ट (1928 ई.)

- भारत के प्रथम देशीय संविधान, नेहरू रिपोर्ट का निर्माण साइमन कमीशन के मुद्दे के साथ जुड़ा हुआ है। दरअसल, 1928 ई. में भारत सचिव बर्केनहेड ने भारतीय दलों को चुनौती दी कि अगर आप में योग्यता है तो आप सर्वसम्मति से एक संविधान प्रस्तुत करें। परिणामतः 1928 ई. में कांग्रेस की एक बैठक हुई और मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक समिति का गठन हुआ जिसका कार्य भारतीय संविधान का निर्माण करना था।
- दिसम्बर, 1928 ई. में कलकत्ता में सर्वदलीय सम्मेलन में नेहरू रिपोर्ट रखी गयी। इसमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रावधान थे –
- भारत को डोमिनियन स्टेटस का दर्जा प्राप्त हो, जिसकी स्थिति ब्रिटिश शासन के अंतर्गत अन्य डोमिनियन राज्यों की तरह हो। इस व्यवस्था में प्रतिरक्षा एवं विदेश मामले ब्रिटिश शासन के पास तथा आंतरिक मामलों में भारत को स्वायत्तता प्राप्त होनी थी।
- यहाँ डोमिनियन स्टेटस की चर्चा करते हुए कहा गया था कि संविधान में नागरिकता की व्याख्या होनी चाहिए तथा मौलिक अधिकारों की घोषणा की जानी चाहिए।
- केन्द्र की तरह प्रांतों में भी उत्तरदायी सरकार की स्थापना होगी, जो गवर्नर की कार्यकारिणी परिषद् से जुड़ी होगी। राजनीतिक संरचना मोटे तौर पर एकात्मक ही थी और अवशिष्ट शक्तियाँ केंद्र को दिए जाने का प्रावधान था।
- नेहरू रिपोर्ट में सिफारिश की गई कि सांप्रदायिक चुनाव पद्धति को समाप्त कर उसके स्थान पर संयुक्त निर्वाचन पद्धति अपनाई जाए, जिसमें अल्पसंख्यक वर्ग के हितों को भी सुनिश्चित किया जाए। इस रिपोर्ट में वयस्क मताधिकार की बात की गई।
- महिलाओं के लिये समान अधिकार तथा संगठन बनाने की स्वतंत्रता एवं धर्म का हर प्रकार के राज्य से पृथक्करण की भी चर्चा की गई थी।
- नेहरू रिपोर्ट में कहा गया कि अगर एक वर्ष तक डोमिनियन स्टेटस का दर्जा नहीं दिया गया तो इस सीमा के पश्चात् पूर्ण स्वराज की बात करने के लिए कांग्रेस स्वतंत्र होगी।
- **असफलता :-** संयुक्त निर्वाचक मंडल एवं कुछ अन्य विषयों पर कॉन्ग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच मतभेद था। परन्तु इस समय नेहरू समिति पर हिंदू महासभा तथा सिख

लीग का दबाव था, जो मुस्लिम लीग को रियायत देने के लिए तैयार नहीं थीं। इसके कारण जिन्ना की माँगों पर कोई सहमति नहीं बन पाई, परिणामस्वरूप मुस्लिम लीग ने सर्वदलीय सम्मेलन से अपने को बाहर कर लिया।

1929 ई. का लाहौर अधिवेशन एवं पूर्ण स्वराज्य

- कॉन्ग्रेस पर युवा वर्ग का प्रभाव बढ़ रहा था। जवाहर लाल नेहरू तथा सुभाष चन्द्र बोस ने पूर्ण स्वाधीनता के लक्ष्यों को स्वीकार करवाने के लिये कांग्रेस के भीतर ही एक दबाव समूह के रूप में 'इंडिपेंडेंस फॉर इंडिया लीग' की स्थापना की। वे डोमिनियन स्टेटस की जगह पूर्ण स्वराज की माँग का पक्षधर थे। दूसरी तरफ, गाँधी भी 6 वर्ष के लंबे अंतराल के बाद सक्रिय राजनीति में लौट आए।
- 1929 ई. में गाँधीजी की मध्यस्थता से जवाहरलाल को लाहौर अधिवेशन का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। लाहौर अधिवेशन में निम्नलिखित महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए-
  1. इसमें पूर्ण स्वराज के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया।
  2. सविनय अवज्ञा आन्दोलन के प्रस्ताव को भी स्वीकार कर लिया गया।
  3. 31 दिसंबर, 1929 को मध्य रात्रि में रावी नदी के तट पर तिरंगा झंडा फहराया गया तथा 26 जनवरी, 1930 ई. को संपूर्ण देश में 'स्वतंत्रता दिवस' मनाने का निर्णय लिया गया।
- एक तरह से अगर देखा जाये तो लाहौर प्रस्ताव एवं पूर्ण स्वराज्य की घोषणा एक आंदोलन से कम नहीं थी क्योंकि भारत एक नये लक्ष्य की ओर बढ़ गया था।

1920 के दशक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में विभिन्न वर्गों की भागीदारी

क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की प्रगति

- असहयोग आंदोलन की असफलता ने आंदोलन के युवा कार्यकर्त्ताओं के मध्य निराशा तथा असंतोष के बीज बो दिए। युवाओं का एक वर्ग जो गाँधीवादी समाधान से संतुष्ट नहीं था, उसने अपने को क्रांतिकारी राजनीति से जोड़ लिया। संयुक्त प्रांत में दो पुराने क्रांतिकारी सचिन सान्याल एवं योगेन्द्र चन्द्र चटर्जी की पहल पर कानपुर में 1924 में 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन आर्मी' का गठन किया गया। इस संस्था की स्थापना का उद्देश्य था सशस्त्र क्रांति के माध्यम से औपनिवेशिक सत्ता को उखाड़ फेंकना तथा एक संघीय गणतंत्र संयुक्त राज्य भारत की स्थापना करना।
- हिंदुस्तान रिपब्लिकन आर्मी ने धन जमा करने के उद्देश्य से पहली बड़ी कार्यवाही काकोरी में रेल का खजाना लूट कर की, परंतु इसके पश्चात् बहुत से क्रांतिकारी नेता गिरफ्तार हो गए। इसमें राम प्रसाद बिस्मिल, रोशन सिंह, अशफाक उल्ला खाँ तथा राजेंद्र लाहिड़ी को फाँसी दे दी गई।
- काकोरी ट्रेन डकैती के पश्चात् पार्टी को पुनर्संगठित करने का काम चन्द्रशेखर आजाद ने किया। 1928 ई. में दिल्ली के फिरोजशाह कोटला की बैठक में भगतसिंह की पहल पर पार्टी का नाम बदलकर 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' रखा गया। इस पर समाजवादी विचारधारा का गहरा प्रभाव देखा गया।
- जब पूरे देश में सविनय अवज्ञा आंदोलन का जोर था तो उसी समय चटगाँव के एक राष्ट्रीय स्कूल के शिक्षक सूर्यसेन ने इंडियन रिपब्लिकन आर्मी के नाम से 18 अप्रैल को चटगाँव शस्त्रागार पर कब्जा कर लिया। इसके तत्काल बाद ही भारत की एक अस्थाई स्वतंत्र सरकार का गठन किया गया जिसके राष्ट्रपति स्वयं सूर्यसेन थे। इस क्रांतिकारी संगठन में व्यापक रूप से महिलाओं की भी भागीदारी दिखती है।
- कुल मिलाकर क्रांतिकारी, बलपूर्वक ब्रिटिश सरकार का तख्ता पलटने में कामयाब नहीं हो पाए। फिर भी क्रांतिकारियों का योगदान इस बात में महत्वपूर्ण है कि जब भी कांग्रेस के अंतर्गत आंदोलन की मुख्य धारा शिथिल पड़ जाती, तो क्रांतिकारी राष्ट्रवादी इस शून्य को भरने का प्रयास करते तथा अभूतपूर्व आत्मत्याग तथा बलिदान का उदाहरण देकर लोगों में राष्ट्रीयता को जगाने का प्रयास करते।

किसानों में जागृति

- 1920 के दशक में किसानों में भी जागृति आ रही थी तथा किसानों की प्रांतीय सभा का गठन हो रहा था। अवध में किसान सभा की स्थापना हुई, जिसने बेदखली रोको आन्दोलन (1920-21) प्रारम्भ किया। आगे मदारी पासी के नेतृत्व में उत्तरी-पश्चिमी संयुक्त प्रांत में एका आंदोलन (1921-22) ने जोर पकड़ लिया। केरल के मालाबार तट पर मोपला कृषकों ने हिन्दू भू-स्वामियों के खिलाफ विद्रोह कर दिया, जिसने कहीं-कहीं भयंकर साम्प्रदायिक रूख अख्तियार कर लिया। 1928 में, बारदोली के किसानों ने वल्लभाई पटेल को सत्याग्रह शुरू करने के लिए आमंत्रित किया जिसमें उन सभी किसनों ने कर का भुगतान न करने का संकल्प लिया। 1929 ई. में सहजानंद सरस्वती ने बिहार किसान संघ की स्थापना की।

श्रमिक आंदोलन

- अब श्रमिकों में भी विरोध की चेतना जाग रही थी। 1920 के असहयोग आंदोलन में भी श्रमिकों की बड़ी सक्रियता रही थी और फिर 1920 में ऑल इण्डिया ट्रेड

यूनियन कांग्रेस (AITUC) की स्थापना हुई जिसकी अध्यक्षता लाला लाजपत राय ने की।

- 1920 के दशक में श्रमिकों को संगठित करने में साम्यवादी नेताओं की भी अहम भूमिका रही। इसी काल में साम्यवादियों के द्वारा श्रमिक एवं किसान पार्टी तथा "गिरनी कामगार यूनियन" का गठन किया गया।

महिलाओं में जागृति

- 1920 के दशक में महिलाओं में भी जागृति आ रही थी। आयरिश महिला श्रीमती एनी बेसेंट तथा मार्ग्रेट कजिंस के द्वारा कई महिला संगठनों की स्थापना की गई। इंटरनेशनल वुमेन्स एसोसिएशन के भाग के रूप में उन्होंने वुमेन्स इंडियन एसोसिएशन का भी गठन किया।
- श्रीमती एनी बेसेन्ट तथा सरोजिनी नायडू जैसी महिला नेताओं ने महिला मताधिकार के मुद्दों को गंभीरता से उठाया। इनके प्रयास से 1921 और 1930 के बीच प्रांतीय बिहार मंडलों में महिलाओं को मताधिकार मिला।
- 1927 में अखिल भारतीय महिला कॉन्फ्रेंस का गठन हुआ तथा इसने महिला शिक्षा से लेकर महिला मताधिकार तक कई मुद्दों को उठाया।
- फिर स्वयं गांधीवादी आंदोलन ने भी महिला जागृति में बढ़-चढ़कर भूमिका निभाई। कहा जाता है कि विश्व के कुछ अन्य लोकप्रिय नेताओं; यथा- सोवियत रूस के लेनिन, चीन के माउत्से तुंग तथा वियतनाम के हो-ची-मिन्ह की तुलना में गांधीवादी आंदोलन में महिलाओं की कहीं अधिक भागीदारी रही थी।

निम्न जातीय आंदोलन

- 1920 के दशक में स्वतंत्रता के अर्थ का विस्तार सामाजिक स्वतंत्रता के क्षेत्र में भी हुआ। महिला एवं निम्न जाति आंदोलन को इस संदर्भ में देखने की जरूरत है।
- निम्न जाति में जागृति फैलाने में ई.वी. रामास्वामी नायकर 'पेरियार' तथा डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। इन दोनों ने मनु स्मृति को जलाकर जाति व्यवस्था की आलोचना की। पेरियार नायकर ने मद्रास में निम्न जाति के उत्थान के लिए 'आत्मसम्मान आंदोलन' आरंभ किया तथा 'कुडि अरसु' नामक पत्र के माध्यम से अपने विचारों को फैलाते रहे। आगे ये द्रविड़ आंदोलन के जनक बने।
- डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने न केवल महाराष्ट्र की अछूत जाति महारों को संगठित किया, बल्कि सम्पूर्ण जीवन निम्न जाति एवं महिलाओं के अधिकारों के लिए लड़ते रहे और सामाजिक न्याय के विचारों को फैलाते रहे।
- **डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने दलितों की सुरक्षा के क्रम में निम्नलिखित कदम उठाये-**
  1. उन्होंने महारों को यह सुझाव दिया कि वे गंदगी की सफाई और मरे हुए पशुओं को ढोना बंद करें।
  2. उन्होंने ब्रिटिश के समक्ष दलित वर्ग के उत्थान की बात उठाई।
  3. साइमन कमीशन एवं गोलमेज सम्मेलन में उन्होंने दलितों के मौलिक अधिकार और पृथक निर्वाचन की माँग रखी।
  4. वे विधानमंडल में दलितों के शोषण की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करते रहे। आगे संविधान सभा में उन्होंने दलित वर्ग के हितों को संरक्षित कर दिया।

अभ्यास प्रश्नः

1. *1920 के दशक से राष्ट्रीय आंदोलन ने कई वैचारिक धाराओं को ग्रहण किया और अपना सामाजिक आधार बढ़ाया। विवेचना कीजिए। (250 शब्द, UPSC-2020)*
2. *गांधीवादी प्रावस्था के दौरान विभिन्न स्वरों ने राष्ट्रवादी आंदोलन को सुदृढ़ एवं समृद्ध बनाया था। विस्तारपूर्वक स्पष्ट कीजिए। (250 शब्द, UPSC-2019)*

सम्प्रदायवाद की प्रगति

1920 के दशक में कांग्रेस से जिन्ना का अलगाव :-

- 1920 के दशक में गाँधी के नेतृत्व में जनआंदोलन का युग आरंभ हुआ तो जिन्ना को अपना राजनीतिक कद छोटा होने का भय सताने लगा। अतः जिन्ना कांग्रेस से दूर होते चले गये तथा मुस्लिम लीग के नेता के रूप में उभरे। उन्होंने अपनी सांप्रदायिक पहचान बनाए रखने पर बल दिया।
- फिर भी, वे अभी भी उदार सम्प्रदायवादी बने रहे। यही वजह है कि साइमन कमीशन बहिष्कार आंदोलन में भी जिन्ना के अधीन मुस्लिम लीग का एक गुट शामिल हुआ। फिर 1928 में नेहरू रिपोर्ट ने संयुक्त निर्वाचन का प्रस्ताव रखा, तो इस पर मुस्लिम लीग के शफी खान का गुट वार्ता करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं था, वहीं जिन्ना वार्ता करने के लिए तैयार थे।
- वस्तुतः 22 दिसंबर, 1928 ई. को कलकत्ता सर्वदलीय सम्मेलन, जिसकी अध्यक्षता डॉ. अंसारी कर रहे थे, में नेहरू रिपोर्ट को पुनः विचारार्थ रखा गया। इसमें मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना ने पृथक् निर्वाचन पद्धति को छोड़ने एवं मुस्लिमों के हितों को संरक्षित करने

की दृष्टि से नेहरू रिपोर्ट में तीन संशोधनात्मक सुझाव दिये जो कि निम्नलिखित हैं-

1. केन्द्रीय विधानमंडल में एक-तिहाई सीटें मुसलमानों के लिए आरक्षित की जाएं।
2. पाँच मुस्लिम बहुल प्रांतों में मुसलमानों को जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व दिया जाए।
3. अवशिष्ट शक्तियाँ प्रांतों में निहित कर दी जाएं।

- परन्तु कलकत्ता सर्वदलीय सम्मेलन में भी इन माँगों पर सहमति नहीं बन सकी। इसके परिणामस्वरूप मुस्लिम लीग ने सर्वदलीय सम्मेलन से अपने को बाहर कर लिया।

जिन्ना का दिल्ली घोषणापत्र (मार्च, 1929) :-

- कलकत्ता सर्वदलीय वार्ता टूटने के बाद जिन्ना ने दिल्ली घोषणा-पत्र लाया तथा इसमें 14 सूत्रीय साम्प्रदायिक माँगें रखी गयीं और ये माँगें आगे मुस्लिम लीग की साम्प्रदायिक राजनीति का आधार बन गईं। जिन्ना की 14 माँगों में प्रमुख माँगें निम्नलिखित थीं-

1. भारत का संविधान परिसंघात्मक हो, जिसमें अवशिष्ट शक्तियाँ प्रांतों को प्राप्त हों।
2. केंद्रीय विधानमंडल में मुसलमानों के लिये कम-से-कम एक तिहाई प्रतिनिधित्व प्राप्त हो।
3. सभी प्रांतों को एक समान स्वायत्तता प्रदान करने के साथ-साथ प्रांतीय विधानमंडलों तथा अन्य निर्वाचित निकायों में अल्पसंख्यकों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाए।
4. विभिन्न सांप्रदायिक समूहों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए पृथक् निर्वाचन मंडल की व्यवस्था लागू रहे।
5. विधानमंडलों एवं अन्य निर्वाचित संस्थाओं में ऐसा कोई प्रस्ताव पारित नहीं किया जाए, जिसका किसी संप्रदाय के तीन-चौथाई सदस्यों ने विरोध किया हो।

- इसके अतिरिक्त, सभी संप्रदायों के लिये धार्मिक स्वतंत्रता, सिंध को बंबई से अलग करने तथा राज्य एवं स्थानीय संस्थाओं की सेवाओं में मुस्लिमों के लिये पर्याप्त आरक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित करने की माँग की गई।

■■■

KHAN GLOBAL STUDIES
Kisan Cold Storage Campus, Musallahpur, Patna-6
KHAN SIR